Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language,
Online ISSN 2348-3083, SJ IMPACT FACTOR 2026: 8.739,
https://www.srjis.com/issues_data/291
PEER REVIEWED, REFEREED & INDEXED JOURNAL, APRIL-MAY 2026, VOL-14/75

वाग्गेयकार पंडित ओंकारनाथ ठाकुर: व्यक्तित्व, कृतित्व, गायन-शैली एवं राग-दृष्टि का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ चारु चंद्र

असिस्टेंट प्रोफेसर संगीत (गायन) संगीत, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय मगराहा मिर्जापुर,

ई-मेल: charunkb2019@gmail.com

Paper Received On: 21 APRIL 2026

Peer Reviewed On: 25 MAY 2026

Published On: 01 JUNE 2026

Abstract

पंडित ओंकारनाथ ठाकुर (1897-1967) बीसवीं शताब्दी के हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के एक बहुआयामी व्यक्तित्व थे—गायक, वाग्गेयकार, संगीतशास्त्री, शिक्षक एवं स्वतंत्रता सेनानी। प्रस्तुत शोध-पत्र उनके व्यक्तित्व, कृतित्व, गायन-शैली और राग-दृष्टि का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन ग्वालियर घराने की परंपरा से आरंभ होकर ओंकारनाथ ठाकुर द्वारा विकसित वैयक्तिक शैली के विविध आयामों—स्वर-संरचना, गमक-तान, काकू-प्रयोग, अभिनय एवं मौन के सृजनात्मक उपयोग—का विश्लेषण करता है। साथ ही, उनकी राग-दृष्टि, रस-सिद्धांत के प्रति उनके दृष्टिकोण, तथा वाग्गेयकार के रूप में उनके योगदान की पड़ताल करता है। यह शोध-पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक स्रोतों, विशेषतः स्वयं ओंकारनाथ ठाकुर की कृतियों, उनके शिष्यों के संस्मरणों, एवं बॉनी सी. वेड, डैनियल एम. न्यूमैन जैसे विद्वानों के कार्यों पर आधारित है।

प्रमुख शब्दः *ओंकारनाथ ठाकुर, ख़याल, ग्वालियर घराना, वाग्गेयकार, राग-दृष्टि, रस-सिद्धांत, काकू-प्रयोग, संगीतांजलि, गंधर्व महाविद्यालय।*

सार (Abstract in Hindi)

पंडित ओंकारनाथ ठाकुर (1897-1967) हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के इतिहास में एक युगांतरकारी उपस्थिति हैं। ग्वालियर घराने की बुनियाद पर खड़ी उनकी गायकी ने ख़याल को एक नई भावात्मक गहराई प्रदान की। प्रस्तुत शोध-पत्र उनके जीवन, संगीत-शिक्षा, गायन-शैली की तकनीकी एवं भावात्मक विशेषताओं, रागों के रस-सिद्धांत आधारित वर्गीकरण, वाग्गेयकार के रूप में उनकी रचनाधर्मिता, शैक्षिक संस्थानों की स्थापना में योगदान, एवं राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी भूमिका का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। शोध में उनकी प्रमुख कृति संगीतांजलि (छह खंड), प्रणव भारती, एवं बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के संगीत संकाय की स्थापना में उनके योगदान का विशेष रूप से मूल्यांकन किया गया है। विधि की दृष्टि से यह अध्ययन ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक

Copyright@2026 Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

पद्धति पर आधारित है, जिसमें प्राथमिक स्रोतों (ठाकुर की मूल रचनाएँ, पत्राचार, अभिलेखीय रिकॉर्डिंग) एवं द्वितीयक स्रोतों (शोध-प्रबंध, समकालीन समीक्षाएँ, शिष्य-संस्मरण) का समालोचनात्मक उपयोग किया गया है।

प्रमुख शब्द: ओंकारनाथ ठाकुर, ख़याल, ग्वालियर घराना, वाग्गेयकार, राग-दृष्टि, रस-सिद्धांत, काकू-प्रयोग, संगीतांजलि, गंधर्व महाविद्यालय, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन, वंदे मातरम।

विषय-सूची

1. भूमिका

2. प्रारंभिक जीवन और संगीतिक पृष्ठभूमि

· 2.1 जन्म, वंश एवं पारिवारिक परिवेश

· 2.2 बाल्यावस्था का संघर्ष

· 2.3 सेठ शाहपुरजी दुंगाजी का संरक्षण

· 2.4 गुरु विष्णु दिगंबर पलुस्कर से शिक्षा

3. ग्वालियर घराने की परंपरा और वैयक्तिक शैली का विकास

· 3.1 ग्वालियर घराने की बुनियादी विशेषताएँ

· 3.2 पारंपरिक शैली से हटकर नवाचार

· 3.3 पटियाला घराने के संपर्क का प्रभाव

· 3.4 ध्रुपदांग और पलुस्कर परंपरा का प्रभाव

4. गायन-शैली का विश्लेषणात्मक अध्ययन

· 4.1 स्वर-संरचना एवं तकनीकी विशेषताएँ

· 4.1.1 तीन सप्तकों में स्वर-विस्तार

· 4.1.2 धात्विक किनारे वाली आवाज़ और वॉल्यूम नियंत्रण

· 4.1.3 स्वर-शुद्धता (पिच एक्ज़ीक्यूशन)

· 4.2 गमक तान और काकू प्रयोग में निपुणता

· 4.3 विलंबित एवं मध्यलय में नियंत्रण

· 4.4 बोल-तान और सपाट तान का कुशल प्रयोग

· 4.5 मौन और ठहराव का सृजनात्मक प्रयोग

5. अभिनय, मुद्राएँ और शब्द-दृष्टि

· 5.1 ख़याल गायन में अभिनय का समावेश

· 5.2 हस्त-संकेतों एवं मुखाभिव्यक्ति द्वारा अर्थ-विस्तार

· 5.3 शब्दों के अर्थ पर विशेष बल

· 5.4 मंच पर राजसी उपस्थिति

· 5.5 स्वर और नाट्य का अंतर्संबंध: भरतमुनि के रस-सिद्धांत का संदर्भ

6. राग-दृष्टि: सैद्धांतिक आधार और व्यावहारिक व्याख्या

- 6.1 रागों का व्यक्तित्व: भावनात्मक संभावनाओं की खोज
- 6.2 रस-सिद्धांत आधारित राग-वर्गीकरण
  - 6.2.1 शृंगार रस: झिंझोटी, खमाज, तिलंग
  - 6.2.2 वीर रस: हिंडोल, शंकरा, आडाणा, हंसध्वनि
  - 6.2.3 करुण रस: नीलांबरी, बागेश्री, टोडी, पीलू
- 6.3 रागों की उपचारात्मक शक्ति पर प्रयोग एवं वैज्ञानिक संवाद
- 6.4 राग व्याख्या की विशिष्टताएँ
  - 6.4.1 राग-विस्तार की अनूठी शैली
  - 6.4.2 काकू प्रयोग के माध्यम से भावाभिव्यक्ति
  - 6.4.3 स्वर-अलंकरण और विशिष्ट सज्जा
  - 6.4.4 राग की धीमी एवं व्यवस्थित प्रगति

7. प्रमुख रागों और रचनाओं का विश्लेषण

- 7.1 ख़याल रचनाएँ
  - 7.1.1 राग दरबारी कान्हड़ा: वंदे मातरम की प्रस्तुति
  - 7.1.2 राग आडाणा: ख़याल गायन का उत्कृष्ट नमूना
  - 7.1.3 राग नीलांबरी: करुण रस की चरम अभिव्यक्ति
- 7.2 भजन और भक्ति संगीत
  - 7.2.1 "जोगी मत जा" (मीरा भजन)
  - 7.2.2 "पाग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे"
  - 7.2.3 "मैया मैं नहीं माखन खायो" (कथा-शैली)
- 7.3 देशभक्ति गीत
  - 7.3.1 वंदे मातरम: स्वतंत्रता का संगीत-प्रतीक
  - 7.3.2 कांग्रेस अधिवेशनों में प्रस्तुतियाँ

8. वाग्गेयकार के रूप में रचनात्मकता

- 8.1 'प्रणव रंग' उपनाम से रचनाएँ
- 8.2 संगीतांजलि श्रृंखला: राग और संगीतशास्त्र का समन्वय
- 8.3 प्रणव भारती एवं अन्य सैद्धांतिक ग्रंथ
- 8.4 बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का कुलगीत
- 8.5 वाग्गेयकार परंपरा में स्थान: एक तुलनात्मक संदर्भ

9. शैक्षिक योगदान: संगीत शिक्षा में संस्थागत क्रांति

- 9.1 गुरु पलुस्कर की परंपरा का विस्तार
- 9.2 लाहौर में गंधर्व महाविद्यालय के प्राचार्य
- 9.3 भरूच में गंधर्व निकेतन की स्थापना
- 9.4 बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में संगीत संकाय
  - 9.4.1 प्रथम डीन के रूप में नियुक्ति (1950)
  - 9.4.2 पाठ्यक्रम का व्यापक डिज़ाइन
  - 9.4.3 संगीतशास्त्र और प्रयोग का समन्वय

10. प्रमुख शिष्य और गुरु-शिष्य परंपरा

- 10.1 डॉ. प्रेमलता शर्मा
- 10.2 डॉ. एन. राजम
- 10.3 पंडित बलवंतराय भट्ट 'भावरंग' एवं परंपरा का संरक्षण
- 10.4 अन्य प्रमुख शिष्य

11. राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान

- 11.1 भरूच जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष
- 11.2 असहयोग आंदोलन में सहभागिता
- 11.3 महात्मा गांधी का मूल्यांकन
- 11.4 15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि: संसद भवन में वंदे मातरम

12. अंतर्राष्ट्रीय ख्याति और यूरोप यात्राएँ

- 12.1 1933: प्रथम यूरोप यात्रा
- 12.2 इटली प्रवास और संस्मरणात्मक प्रसंग
- 12.3 1954 तक यूरोप में प्रस्तुतियाँ

13. सम्मान और पुरस्कार

14. व्यक्तित्व और व्यक्तिगत जीवन

15. विवाद और समालोचना

- 15.1 मुस्लिम संगीतकारों के योगदान के मूल्यांकन पर प्रश्न
- **15.2 समकालीन आलोचना और बहस**

16. अंतिम वर्ष और निधन

17. विरासत और समकालीन प्रभाव

18. निष्कर्ष

19. संदर्भ ग्रंथ सूची

Copyright@2026 Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

1. भूमिका

हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत के बीसवीं शताब्दी के इतिहास में कुछ ऐसे विरल व्यक्तित्व हुए हैं जिन्होंने एक साथ कई स्तरों पर परंपरा को प्रभावित किया—गायक के रूप में, विचारक के रूप में, शिक्षक के रूप में, और रचनाकार के रूप में। पंडित ओंकारनाथ ठाकुर (1897-1967) ऐसे ही एक बहुआयामी कलासाधक थे। वे केवल ग्वालियर घराने के एक प्रतिनिधि गायक ही नहीं थे; उन्होंने अपनी वैयक्तिक प्रतिभा से ख़याल गायन में एक नई भावात्मक गहराई का समावेश किया, जिसे संगीत-समीक्षकों ने 'रोमांटिक' संवेदनशीलता की संज्ञा दी।

ओंकारनाथ ठाकुर का महत्व केवल मंचीय प्रस्तुतियों तक सीमित नहीं है। एक ओर जहाँ उनकी आवाज़ का जादू महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और प्रिथ्वीराज कपूर जैसे व्यक्तित्वों को मोहित करता था, वहीं दूसरी ओर उन्होंने संगीतांजलि जैसे छह खंडों के विशाल ग्रंथ की रचना कर संगीतशास्त्र और प्रायोगिक संगीत के बीच एक सेतु का निर्माण किया। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में संगीत संकाय के प्रथम डीन के रूप में उन्होंने भारतीय संगीत-शिक्षा को एक आधुनिक संस्थागत स्वरूप प्रदान किया। 15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि को संसद भवन में उनके स्वरों में गूँजा 'वंदे मातरम' भारतीय स्वतंत्रता के इतिहास का एक अविस्मरणीय क्षण बन गया।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य पंडित ओंकारनाथ ठाकुर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का एक व्यापक, विश्लेषणात्मक और स्रोत-आधारित अध्ययन प्रस्तुत करना है। यह अध्ययन उनकी गायन-शैली की तकनीकी बारीकियों, राग-दृष्टि के सैद्धांतिक आधारों, वाग्गेयकार के रूप में उनकी रचनात्मकता, और शिक्षक के रूप में उनके संस्थागत योगदान पर केंद्रित है। विधि की दृष्टि से यह कार्य ऐतिहासिक-विश्लेषणात्मक पद्धति का अनुसरण करता है। प्राथमिक स्रोतों में स्वयं ओंकारनाथ ठाकुर की रचनाएँ, आकाशवाणी अभिलेखागार में संरक्षित रिकॉर्डिंग्स, तथा समकालीन पत्राचार शामिल हैं। द्वितीयक स्रोतों में बॉनी सी. वेड (1984, 2001), हैरियट कुक ह्यूरी (1980), एवं डैनियल एम. न्यूमैन (1990) जैसे विद्वानों के कार्य, साथ ही श्रुति पत्रिका एवं द हिन्दू जैसी पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेख सम्मिलित हैं।

यह शोध-पत्र न केवल ओंकारनाथ ठाकुर के संगीत-योगदान का दस्तावेज़ीकरण करता है, बल्कि उन विवादास्पद पक्षों को भी संबोधित करता है जो उनके व्यक्तित्व एवं विचारों से जुड़े रहे हैं—विशेषतः मुस्लिम संगीतकारों के योगदान के मूल्यांकन का प्रश्न। इस प्रकार यह अध्ययन ओंकारनाथ ठाकुर को उनकी समग्रता में समझने का एक प्रयास है।

2. प्रारंभिक जीवन और संगीतिक पृष्ठभूमि

2.1 जन्म, वंश एवं पारिवारिक परिवेश

पंडित ओंकारनाथ ठाकुर का जन्म 24 जून 1897 को बड़ौदा रियासत (वर्तमान गुजरात) के खंभात जिले के जहाज नामक गाँव में हुआ। उनके वंश की जड़ें सैनिक परंपरा में गहराई तक फैली थीं। उनके पितामह महाशंकर ठाकुर ने 1857 के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में नाना साहब पेशवा की ओर से युद्ध में भाग लिया था। यह वंशानुगत वीरता और स्वाभिमान की भावना ओंकारनाथ के व्यक्तित्व में भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती थी। उनके पिता गौरीशंकर

ठाकुर बड़ौदा की महारानी जमनाबाई की सेना में कार्यरत थे, जहाँ वे 200 घुड़सवार सैनिकों की कमान संभालते थे।

2.2 बाल्यावस्था का संघर्ष

पारिवारिक समृद्धि शीघ्र ही विघटित हो गई। ओंकारनाथ के पिता ने सांसारिक मोह त्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया, जिससे परिवार आर्थिक संकट में पड़ गया। पैतृक संपत्ति में हिस्सा न मिलने के कारण 1900 में परिवार को भरूच स्थानांतरित होना पड़ा। मात्र पाँच वर्ष की आयु से ही ओंकारनाथ को परिवार के भरण-पोषण हेतु श्रम करना पड़ा—मिलों में मज़दूरी, रामलीला मंडली में अभिनय, और यहाँ तक कि घरेलू सेवक का कार्य भी किया। चौदह वर्ष की आयु में पिता के निधन ने उन्हें पूर्णतः अनाथ कर दिया। संगीत-समीक्षकों ने बाद में टिप्पणी की कि संभवतः इन्हीं प्रारंभिक संघर्षों ने उनकी गायकी में करुणा और गहराई के उन भावों को जन्म दिया जो उन्हें उनके समकालीनों से अलग करते थे।

2.3 सेठ शाहपुरजी दुंगाजी का संरक्षण

भाग्य ने तब करवट ली जब पारसी परोपकारी सेठ शाहपुरजी मानचेरजी दुंगाजी ने बालक ओंकारनाथ की गायन-प्रतिभा को पहचाना। लगभग 1909 में, उन्होंने ओंकारनाथ और उनके छोटे भाई रमेशचंद्र को बॉम्बे स्थित गंधर्व महाविद्यालय में प्रसिद्ध गायक एवं संगीत-शिक्षाविद् विष्णु दिगंबर पलुस्कर के सान्निध्य में शास्त्रीय संगीत का विधिवत प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए प्रायोजित किया। यह संरक्षण ओंकारनाथ के जीवन का निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ।

2.4 गुरु विष्णु दिगंबर पलुस्कर से शिक्षा

पंडित विष्णु दिगंबर पलुस्कर (1872-1931) ग्वालियर घराने के प्रख्यात गायक होने के साथ-साथ संगीत शिक्षा को संस्थागत रूप देने वाले अग्रणी पुरोधा थे। उन्होंने गंधर्व महाविद्यालय की स्थापना कर संगीत को घरानों की बंद दीवारों से निकालकर सार्वजनिक शिक्षा का विषय बनाने का साहसिक प्रयास किया। ओंकारनाथ ने उनके सान्निध्य में गुरु-शिष्य परंपरा के अनुरूप कठोर तालीम प्राप्त की। प्रशिक्षण में गायन के साथ-साथ पखावज वादन और संगीतशास्त्र का अध्ययन भी सम्मिलित था। उन्होंने 1918 में अपना प्रथम सार्वजनिक संगीत-समारोह प्रस्तुत किया, किंतु 1931 में गुरु के देहावसान तक उनसे सीखने का क्रम जारी रखा। पलुस्कर की शिक्षण-पद्धति और संगीत-दर्शन का प्रभाव ओंकारनाथ के संपूर्ण जीवन-कार्य पर दृष्टिगोचर होता है।

3. ग्वालियर घराने की परंपरा और वैयक्तिक शैली का विकास

3.1 ग्वालियर घराने की बुनियादी विशेषताएँ

ग्वालियर घराना हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत का प्राचीनतम घराना माना जाता है। इस घराने की गायकी की बुनियादी विशेषताओं में खुली और बलशाली आवाज़ (जिसे 'मर्दाना' गायकी कहा जाता है), सपाट तानों की प्रधानता, ध्रुपद अंग का स्पष्ट प्रभाव, तथा लयकारी पर विशेष बल शामिल हैं। बॉनी सी. वेड ने ख़याल: क्रिएटिविटी विदिन नॉर्थ इंडियाज़ क्लासिकल म्यूज़िक ट्रेडिशन (1984) में ग्वालियर शैली की इन विशेषताओं का विस्तृत विवेचन किया है।

3.2 पारंपरिक शैली से हटकर नवाचार

ओंकारनाथ ठाकुर ने अपने गुरु से ग्वालियर घराने की शुद्ध परंपरा में प्रशिक्षण प्राप्त किया, किंतु समय के साथ उन्होंने अपनी एक पृथक पहचान विकसित की। उन्होंने ग्वालियर घराने की बुनियादी संरचनात्मक विशेषताओं को सुरक्षित रखते हुए, उसमें भावनात्मक गहराई और नाटकीयता का समावेश किया। कई संगीत-समीक्षकों ने उन्हें 'ख़याल गायन का प्रथम रोमांटिसिस्ट' कहा है। इसका तात्पर्य यह है कि उन्होंने ख़याल को केवल तकनीकी प्रदर्शन का माध्यम न रहने देकर, उसमें वैयक्तिक भावना और रोमांटिक अभिव्यक्ति के तत्वों को स्थान दिया। ग्वालियर घराने में जिस भावनात्मक पक्ष की सापेक्ष कमी मानी जाती थी, ओंकारनाथ ने अपनी वैयक्तिक प्रतिभा से उस अभाव की पूर्ति की।

3.3 पटियाला घराने के संपर्क का प्रभाव

1916 में जब ओंकारनाथ ठाकुर लाहौर में गंधर्व महाविद्यालय के प्राचार्य नियुक्त हुए, तो उनका संपर्क पटियाला घराने के प्रसिद्ध गायकों अली बख्श और काले खाँ (बड़े गुलाम अली खाँ के चाचा) से हुआ। इस संगीतात्मक आदान-प्रदान ने उनकी शैली को और समृद्ध किया। पटियाला घराने की गमक, तानों की जटिलता और लयकारी की कुछ बारीकियों को उन्होंने अपनी गायकी में समाहित किया। यह उनकी कलात्मक उदारता का प्रमाण है कि वे अन्य घरानों की विशेषताओं से सीखने और उन्हें आत्मसात करने में संकोच नहीं करते थे।

3.4 ध्रुपदांग और पलुस्कर परंपरा का प्रभाव

यद्यपि ओंकारनाथ ठाकुर की ख्याति मुख्यतः ख़याल गायक के रूप में है, तथापि उनकी गायकी में ध्रुपद की गंभीरता, आलाप-विस्तार की व्यवस्थित पद्धति, और ओजस्विता का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। यह ध्रुपदांग उन्हें अपने गुरु पलुस्कर से प्राप्त हुआ था, जो स्वयं ध्रुपद और ख़याल दोनों में पारंगत थे। बॉनी सी. वेड (1984) के अनुसार, ग्वालियर घराने की यह विशेषता रही है कि उसमें ध्रुपद का गांभीर्य और ख़याल की लयात्मक विविधता का समन्वय देखने को मिलता है। ओंकारनाथ ठाकुर की गायकी में यह समन्वय अपनी चरम सीमा पर दिखाई देता है—एक ओर आलाप का धीर-गंभीर विस्तार, तो दूसरी ओर बोल-तानों की चंचल लयकारी।

4. गायन-शैली का विश्लेषणात्मक अध्ययन

ओंकारनाथ ठाकुर की गायन-शैली का विश्लेषण करते समय यह स्पष्ट होता है कि उसमें अनेक ऐसे तत्व विद्यमान हैं जो उन्हें उनके पूर्ववर्तियों और समकालीनों से भिन्न करते हैं। यह अध्याय उन तकनीकी और भावात्मक पक्षों का सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत करता है।

4.1 स्वर-संरचना एवं तकनीकी विशेषताएँ

4.1.1 तीन सप्तकों में स्वर-विस्तार

ओंकारनाथ ठाकुर की आवाज़ की प्रथम और सर्वाधिक स्पष्ट विशेषता थी उसका असाधारण स्वर-विस्तार। वे मंद्र, मध्य और तार—तीनों सप्तकों में समान सहजता से गायन कर सकते थे। यह क्षमता विरल गायकों में ही पाई जाती है। उनके समकालीन आलोचक उनकी स्वर-सीमा और वॉल्यूम की मुक्तकंठ से प्रशंसा करते थे। तीनों सप्तकों में उनकी आवाज़ न केवल विस्तृत थी, अपितु अत्यंत स्पष्ट और शक्तिशाली भी थी।

4.1.2 धात्विक किनारे वाली आवाज़ और वॉल्यूम नियंत्रण

उनकी आवाज़ में एक विशिष्ट 'धात्विक किनारा' (मेटलिक एज) विद्यमान था, जो उसे सघन भीड़ में भी पृथक रूप से पहचाने जाने योग्य बनाता था। यह धात्विकता उनके स्वरों में एक चमक और पैनापन उत्पन्न करती थी, जो श्रोताओं को प्रारंभ से ही आकर्षित कर लेती थी। उनकी प्रमुख शिष्या डॉ. एन. राजम के अनुसार, ओंकारनाथ ठाकुर का वॉल्यूम नियंत्रण अद्वितीय था। वे एक ही स्वर को अत्यंत मंद ध्वनि से आरंभ कर क्रमशः पूर्ण तीव्रता तक ले जा सकते थे और संपूर्ण प्रक्रिया में स्वर-शुद्धता बनाए रखते थे। यह नियंत्रण दीर्घकालीन साधना और अभ्यास का परिणाम था।

4.1.3 स्वर-शुद्धता (पिच एक्ज़ीक्यूशन)

ओंकारनाथ ठाकुर की गायकी की तीसरी तकनीकी विशेषता थी स्वरों की निर्दोष शुद्धता। डॉ. राजम बताती हैं कि "संपूर्ण गायन के दौरान पिच की सटीकता" उनकी गायकी की पहचान थी। वे प्रत्येक स्वर को उसकी यथार्थ पिच पर स्थापित करते थे और विलंबित से द्रुत लय तक की संपूर्ण प्रस्तुति में इस शुद्धता को यथावत बनाए रखते थे।

4.2 गमक तान और काकू प्रयोग में निपुणता

ओंकारनाथ ठाकुर की गायकी गमक तान और काकू प्रयोग के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध थी। गमक तान वह तान होती है जिसमें स्वरों में कंपन होता है; काकू प्रयोग का अर्थ है शब्दों और स्वरों के उतार-चढ़ाव द्वारा भावों की अभिव्यक्ति। ओंकारनाथ ठाकुर काकू प्रयोग के माध्यम से राग के भावों की इतनी गहरी एवं सूक्ष्म अभिव्यक्ति करते थे कि श्रोता सीधे उस भाव-संसार से जुड़ जाता था। डॉ. राजम के अनुसार, उनके "काकू प्रयोग, स्वरों की शुद्धता, और उनके विशिष्ट अलंकरण" उनकी पहचान थे।

4.3 विलंबित एवं मध्यलय में नियंत्रण

उनकी ख़याल प्रस्तुति में विलंबित (धीमी) और मध्यलय में नियंत्रण विशेष उल्लेखनीय था। वे धीमी गति में राग का इतना विस्तृत और गहन आलाप प्रस्तुत करते थे कि राग का प्रत्येक स्वर अपनी संपूर्ण भावात्मक गहराई के साथ उभर कर सामने आता था। डॉ. राजम के शब्दों में, "विलंबित और मध्यलय में उनके वॉल्यूम नियंत्रण" की तुलना विरल ही की जा सकती है।

4.4 बोल-तान और सपाट तान का कुशल प्रयोग

ग्वालियर घराने की परंपरा के अनुरूप, ओंकारनाथ ठाकुर बोल-तान और सपाट तान का कुशलता से प्रयोग करते थे। बोल-तान में गीत के शब्दों पर ही तानें बुनी जाती हैं। उनकी तानें इतनी स्पष्ट, तीव्र और लय-प्रधान होती थीं कि श्रोता चकित रह जाते थे। यह ग्वालियर घराने की 'मर्दाना' गायकी का प्रतिनिधि लक्षण था, जिसे उन्होंने पूर्ण निपुणता के साथ प्रस्तुत किया।

4.5 मौन और ठहराव का सृजनात्मक प्रयोग

ओंकारनाथ ठाकुर ने रहमत अली खाँ नामक एक रहस्यवादी गायक से मौन के महत्व को सीखा था। वे अपने गायन में मौन का प्रयोग एक सचेत कलात्मक उपकरण के रूप में करते थे। गीत के बीच में अचानक ठहराव, एक स्वर के पश्चात् का मौन—यह सब उनके गायन में एक नाटकीय तनाव और अपेक्षा का भाव उत्पन्न करता था। बॉनी सी. वेड (1984, पृ. 258-260) ने भी ओंकारनाथ की इस विशेषता की ओर संकेत किया है, जो उन्हें ग्वालियर घराने के अन्य गायकों से पृथक करती है।

5. अभिनय, मुद्राएँ और शब्द-दृष्टि

5.1 ख़याल गायन में अभिनय का समावेश

पारंपरिक ख़याल गायन मुख्यतः श्रव्य कला रहा है, जिसमें गायक की देह-भाषा और मुखाभिव्यक्ति गौण मानी जाती थी। ओंकारनाथ ठाकुर ने इस परिपाटी को भंग करते हुए ख़याल गायन में अभिनय के तत्वों का सचेत और व्यापक प्रयोग किया। कई संगीत-समीक्षकों ने इसी कारण उन्हें 'ख़याल गायन का प्रथम रोमांटिसिस्ट' कहा है। उन्होंने अपनी प्रस्तुतियों में चेहरे के भावों और हाथों के इशारों का प्रयोग कर गायन को श्रव्य से दृश्य-श्रव्य अनुभव में रूपांतरित कर दिया।

5.2 हस्त-संकेतों एवं मुखाभिव्यक्ति द्वारा अर्थ-विस्तार

डॉ. एन. राजम के अनुसार, उन्होंने "चेहरे के भावों और हाथों के इशारों जैसे अभिनय के कुछ पहलुओं का सचेत और व्यापक उपयोग" किया। इससे उनकी प्रस्तुति में एक मजबूत दृश्य-श्रव्य अभिव्यक्ति निर्मित होती थी जो भावनात्मक प्रभाव से परिपूर्ण होती थी। यह शैली उनसे पूर्व ख़याल गायन में अप्रचलित थी और उनके पश्चात् भी बहुत कम गायक इसे अपना सके।

5.3 शब्दों के अर्थ पर विशेष बल

उनके लिए गीत के शब्दों का अर्थ तकनीकी प्रदर्शन से कम महत्वपूर्ण नहीं था। वे शब्दों के अर्थ को संपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान करना चाहते थे। यही कारण था कि वे भजन और भक्ति-गीतों को भी उतनी ही भावप्रवणता से प्रस्तुत करते थे जितनी ख़याल को। मीरा के भजन—"जोगी मत जा" और "पाग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे"—उनकी हस्ताक्षर रचनाएँ बन गईं और उनमें शब्द और भाव का यह अंतर्संबंध स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

5.4 मंच पर राजसी उपस्थिति

संगीत-समीक्षकों ने उन्हें "बीसवीं सदी के संगीतकारों में राजसी उपस्थिति" वाला बताया है। वे मंच पर विशिष्ट ठाट-बाट के साथ विराजमान होते थे; उनके लंबे केश और प्रभावशाली व्यक्तित्व उनकी मंचीय उपस्थिति को और भी प्रभावी बनाते थे। यह राजसी छवि उनके गायन की ओजस्विता के साथ पूर्ण सामंजस्य रखती थी।

Copyright@2026 Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

5.5 स्वर और नाट्य का अंतर्संबंध: भरतमुनि के रस-सिद्धांत का संदर्भ

ओंकारनाथ ठाकुर की गायकी का विश्लेषण भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में प्रतिपादित रस-सिद्धांत के संदर्भ में किया जा सकता है। भरत के अनुसार, विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। ओंकारनाथ ठाकुर अपने स्वर-प्रयोग (काकू) द्वारा विभाव का सृजन करते थे, मुखाभिव्यक्ति और हस्त-संकेतों द्वारा अनुभाव प्रस्तुत करते थे, और मौन एवं ठहराव द्वारा व्यभिचारी भावों को जाग्रत करते थे। यह दुर्लभ समन्वय ही था जो उनकी गायकी को केवल श्रव्य-सुख से ऊपर उठाकर एक संपूर्ण रसानुभूति में रूपांतरित कर देता था। वेड (2001) ने न्यू ग्रोव डिक्शनरी में ओंकारनाथ की इस विशेषता को "गायन में नाटकीय तड़क-भड़क" के रूप में रेखांकित किया है।

6. राग-दृष्टि: सैद्धांतिक आधार और व्यावहारिक व्याख्या

6.1 रागों का व्यक्तित्व: भावनात्मक संभावनाओं की खोज

ओंकारनाथ ठाकुर का मानना था कि प्रत्येक राग का अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व और भावनात्मक चरित्र होता है। उन्होंने रागों को केवल स्वरों का तकनीकी संयोजन नहीं माना, अपितु उनमें निहित भावनात्मक संभावनाओं की गहन खोज की। उनकी दृष्टि में, राग एक जीवंत इकाई था जो श्रोता के मन में विशिष्ट भावों और रसों को जाग्रत करने की क्षमता रखता है। हैरियट कुक ह्यूरी (1980) ने अपने शोध-प्रबंध में इस पक्ष का विस्तृत विश्लेषण किया है।

6.2 रस-सिद्धांत आधारित राग-वर्गीकरण

ओंकारनाथ ठाकुर ने रागों का वर्गीकरण उनके प्रमुख रसों के अनुसार किया। यह वर्गीकरण भारतीय काव्यशास्त्र के रस-सिद्धांत पर आधारित था और संगीत के क्षेत्र में एक मौलिक प्रयास था।

6.2.1 शृंगार रस: झिंझोटी, खमाज, तिलंग

इन रागों में वे प्रेम, सौंदर्य और शृंगार के भावों की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति करते थे। राग तिलंग की उनकी प्रस्तुति में एक मधुर, रोमांटिक भावना और हल्की-सी तड़प का अनुभव होता था।

6.2.2 वीर रस: हिंडोल, शंकरा, आडाणा, हंसध्वनि

इन रागों के माध्यम से वे वीरता, उत्साह और ओज के भावों को जाग्रत करते थे। राग हिंडोल में जब वे ऊँचे स्वरों में उड़ान भरते थे, तो श्रोता रोमांचित हो उठते थे। राग आडाणा की उनकी प्रस्तुति को डॉ. राजम ने उनके गायन-कौशल का उत्कृष्ट नमूना बताया है।

6.2.3 करुण रस: नीलांबरी, बागेश्री, टोडी, पीलू

करुण रस उनके सर्वाधिक प्रिय रसों में से था। राग बागेश्री और टोडी में उनकी गायकी का करुण पक्ष अद्वितीय था। राग नीलांबरी में वे करुणा की ऐसी गहराइयों में उतरते थे कि श्रोताओं की आँखें नम हो जाती थीं। डॉ. राजम के एनसीपीए के 'नाद निनाद' सत्र में राग नीलांबरी के चुनिंदा अंश विशेष रूप से प्रस्तुत किए गए थे।

6.3 रागों की उपचारात्मक शक्ति पर प्रयोग एवं वैज्ञानिक संवाद

ओंकारनाथ ठाकुर ने रागों की उपचारात्मक शक्ति पर गंभीर प्रयोग किए। उनका मत था कि स्वर भाव और रस उत्पन्न कर सकते हैं और रागों का मानव मन एवं शरीर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इस विषय पर उन्होंने प्रसिद्ध वैज्ञानिक सर जगदीश चंद्र बोस (1858-1937) के साथ अपने सिद्धांतों को साझा किया। यद्यपि इस संवाद के विस्तृत दस्तावेजी प्रमाण सीमित हैं, तथापि यह तथ्य ओंकारनाथ ठाकुर के वैज्ञानिक दृष्टिकोण और अंतःविषयक चिंतन का परिचायक है।

कुछ संस्मरणात्मक स्रोतों में वर्णित है कि 1933 की रोम यात्रा के दौरान उन्होंने इटली के तानाशाह बेनिटो मुसोलिनी के समक्ष भारतीय रागों के भावात्मक प्रभाव का प्रदर्शन किया। इन स्रोतों के अनुसार, राग हिंडोल (वीर रस) ने मुसोलिनी में तीव्र उत्तेजना उत्पन्न की, जबकि राग छायानट (करुण रस) ने उन्हें भावुक कर दिया। यद्यपि इस घटना के संबंध में स्वतंत्र ऐतिहासिक प्रमाण सीमित हैं, तथापि यह प्रसंग ओंकारनाथ ठाकुर की राग-दृष्टि और संगीत-मनोविज्ञान संबंधी चिंतन का संकेत देता है। श्रुति पत्रिका (अप्रैल 1998, पृ. 19-21) में इस प्रसंग का विस्तृत उल्लेख मिलता है।

6.4 राग व्याख्या की विशिष्टताएँ

6.4.1 राग-विस्तार की अनूठी शैली

डॉ. एन. राजम के अनुसार, "ख़याल प्रस्तुति में राग विस्तार की उनकी अनूठी और अत्यधिक व्यक्तिगत शैली" उनकी पहचान थी। वे राग को इतने विस्तार और गहराई से प्रस्तुत करते थे कि उसका प्रत्येक पक्ष क्रमशः उभर कर सामने आता था। यह विस्तार न केवल तकनीकी कौशल का प्रदर्शन था, अपितु राग के भावनात्मक व्यक्तित्व का क्रमिक अनावरण भी था।

6.4.2 काकू प्रयोग के माध्यम से भावाभिव्यक्ति

वे काकू प्रयोग के माध्यम से राग के भावों की सूक्ष्मतम अभिव्यक्ति करते थे। स्वरों में उतार-चढ़ाव, आरोह-अवरोह की विशिष्ट शैली, और ध्वनि के तीव्रता-मंदता का नियंत्रण—इन सबके माध्यम से वे श्रोता को सीधे भाव-संसार से जोड़ देते थे।

6.4.3 स्वर-अलंकरण और विशिष्ट सज्जा

उनके गायन में स्वरों के अलंकरण और विशिष्ट सज्जा (ऑर्नामेंटेशन) उनकी शैली की पहचान थे। वे स्वरों को इस प्रकार सजाते-सँवारते थे कि वे अधिक आकर्षक और भावपूर्ण हो जाते थे। यह अलंकरण कभी अतिरेकपूर्ण नहीं होते थे, बल्कि राग के मूल चरित्र के अनुरूप ही रहते थे।

6.4.4 राग की धीमी एवं व्यवस्थित प्रगति

डॉ. राजम के शब्दों में, "राग का संपूर्ण और धीमा विकास और प्रगति" उनकी प्रस्तुतियों की विशेषता थी। वे राग के प्रत्येक स्वर को पर्याप्त समय देते थे, उसे पूर्णतः स्थापित करते थे, और तत्पश्चात् ही अगले स्वर की ओर प्रवृत्त होते थे। यह धीमी और व्यवस्थित प्रगति श्रोता को राग की आत्मा में डूबने का अवसर प्रदान करती थी।

7. प्रमुख रागों और रचनाओं का विश्लेषण

7.1 ख़याल रचनाएँ

7.1.1 राग दरबारी कान्हड़ा: वंदे मातरम की प्रस्तुति

15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि को, जब भारत स्वतंत्र हुआ, ओंकारनाथ ठाकुर ने राग दरबारी कान्हड़ा में 'वंदे मातरम' प्रस्तुत किया। राग दरबारी की गंभीरता, गांभीर्य और गहराई ने 'वंदे मातरम' के देशभक्ति भाव को और अधिक प्रभावशाली बना दिया। यह प्रस्तुति आकाशवाणी के अभिलेखागार में संरक्षित है और भारतीय स्वतंत्रता के इतिहास का एक अमर क्षण है।

7.1.2 राग आडाणा: ख़याल गायन का उत्कृष्ट नमूना

राग आडाणा में उनकी ख़याल प्रस्तुति उनके गायन-कौशल का उत्कृष्ट नमूना है। डॉ. राजम के अनुसार, राग आडाणा को ख़याल रूप में प्रस्तुत करने की उनकी शैली अद्वितीय थी। इस राग में उन्होंने वीर रस का भाव जगाया और अपनी तकनीकी कुशलता का परिचय दिया।

7.1.3 राग नीलांबरी: करुण रस की चरम अभिव्यक्ति

राग नीलांबरी उनके प्रिय करुण रस के रागों में से था। इस राग में उनकी गायकी की सबसे मार्मिक अभिव्यक्ति देखने को मिलती थी। डॉ. राजम के 'नाद निनाद' सत्र में राग नीलांबरी के चुनिंदा अंश विशेष रूप से प्रस्तुत किए गए थे।

7.2 भजन और भक्ति संगीत

7.2.1 "जोगी मत जा" (मीरा भजन)

मीराबाई का यह भजन ओंकारनाथ ठाकुर की सर्वाधिक प्रसिद्ध रचनाओं में से है। इसमें उन्होंने विरह और भक्ति के भावों की असाधारण अभिव्यक्ति की। उनके गायन ने इस भजन को स्थायी लोकप्रियता प्रदान की।

7.2.2 "पाग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे"

यह भी मीरा का प्रसिद्ध भजन है जो उनकी हस्ताक्षर रचना बन गया। इसमें उन्होंने मीरा के भक्ति-भाव को इतनी गहराई से व्यक्त किया कि श्रोता उस भक्ति-रस में निमग्न हो जाता था।

7.2.3 "मैया मैं नहीं माखन खायो" (कथा-शैली)

कृष्ण-लीला पर आधारित इस प्रसिद्ध भजन को उन्होंने कथा-शैली में प्रस्तुत किया। इसमें बाल-कृष्ण और यशोदा के संवाद को नाटकीय रूप में प्रस्तुत किया गया था। उनके अभिनय और स्वर-उतार-चढ़ाव ने इस भजन को जीवंत कर दिया।

7.3 देशभक्ति गीत

7.3.1 वंदे मातरम: स्वतंत्रता का संगीत-प्रतीक

ओंकारनाथ ठाकुर की 'वंदे मातरम' की प्रस्तुति भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का एक अभिन्न अंग बन गई थी। कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों में उनकी यह प्रस्तुति नियमित रूप से होती थी। 15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि को संसद भवन में उन्होंने राग दरबारी में 'वंदे मातरम' गाया, जो स्वतंत्र भारत के प्रथम क्षणों का साक्षी बना।

7.3.2 कांग्रेस अधिवेशनों में प्रस्तुतियाँ

1920 के दशक से ही ओंकारनाथ ठाकुर की देशभक्ति गीतों की प्रस्तुतियाँ कांग्रेस के अधिवेशनों का नियमित और अपेक्षित अंग बन गई थीं। उनकी प्रस्तुतियाँ श्रोताओं में राष्ट्रीयता की भावना जाग्रत करने में अत्यंत प्रभावशाली सिद्ध होती थीं।

8. वाग्गेयकार के रूप में रचनात्मकता

'वाग्गेयकार' भारतीय संगीत-परंपरा का वह पारिभाषिक शब्द है जो उस कलाकार के लिए प्रयुक्त होता है जो गीत (वाक्) और संगीत (गेय) दोनों का रचयिता हो। पंडित ओंकारनाथ ठाकुर इस परंपरा के बीसवीं शताब्दी के उत्कृष्ट प्रतिनिधि थे।

8.1 'प्रणव रंग' उपनाम से रचनाएँ

उन्होंने अपनी रचनाओं में 'प्रणव रंग' उपनाम का प्रयोग किया। यह उपनाम उनके रचनात्मक व्यक्तित्व का प्रतीक था। 'प्रणव' ॐ कार का वाचक है और 'रंग' संगीत के रंजक तत्व का—दोनों का यह संयोग उनकी कला की आध्यात्मिक एवं कलात्मक गहराई को व्यंजित करता है।

8.2 संगीतांजलि श्रृंखला: राग और संगीतशास्त्र का समन्वय

उनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण कृति है संगीतांजलि—छह खंडों में प्रकाशित एक विशाल संग्रह। इस ग्रंथ-श्रृंखला में उन्होंने विभिन्न रागों में बंदिशें, भजन और देशभक्ति गीत संकलित किए और साथ ही उनका सैद्धांतिक विवेचन भी प्रस्तुत किया। डॉ. राजम के अनुसार, यह पुस्तक-श्रृंखला संगीतशास्त्र और प्रायोगिक संगीत को एक साथ लाने का सफल प्रयास थी। प्रत्येक खंड में रागों का विस्तृत परिचय, बंदिशों की स्वरलिपि, और गायन-शैली संबंधी निर्देश सम्मिलित हैं।

8.3 प्रणव भारती एवं अन्य सैद्धांतिक ग्रंथ

संगीतांजलि के अतिरिक्त, उन्होंने प्रणव भारती सहित कई सैद्धांतिक ग्रंथों की रचना की। इनमें भारतीय संगीत के इतिहास, सिद्धांत और दर्शन पर उनके विचार संकलित हैं। ये ग्रंथ उनके गंभीर चिंतन और विद्वत्ता के साक्षी हैं।

8.4 बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का कुलगीत

उन्होंने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का कुलगीत (यूनिवर्सिटी एंथम) भी रचा। यह गीत आज भी विश्वविद्यालय के समारोहों में गाया जाता है और उनके वाग्गेयकार व्यक्तित्व का एक जीवंत प्रमाण है।

8.5 वाग्गेयकार परंपरा में स्थान: एक तुलनात्मक संदर्भ

भारतीय संगीत में वाग्गेयकारों की एक दीर्घ एवं समृद्ध परंपरा रही है। अठारहवीं शताब्दी में सदारंग और अदारंग ने ख़याल रचनाओं को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया। उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी में विष्णु दिगंबर पलुस्कर ने संगीत-रचनाओं के साथ शिक्षा-पद्धति का विकास किया। इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए ओंकारनाथ ठाकुर ने संगीतांजलि जैसे बृहत् ग्रंथ की रचना की। उनके पश्चात् उनके प्रमुख शिष्य पंडित बलवंतराय भट्ट 'भावरंग' ने इस

परंपरा का संरक्षण और विकास किया। वेड (1984) और ह्यूरी (1980) ने अपने अध्ययनों में इस परंपरा की निरंतरता और विकास का सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

9. शैक्षिक योगदान: संगीत शिक्षा में संस्थागत क्रांति

9.1 गुरु पलुस्कर की परंपरा का विस्तार

विष्णु दिगंबर पलुस्कर ने गंधर्व महाविद्यालय की स्थापना कर संगीत-शिक्षा को घरानों की मौखिक परंपरा से निकालकर संस्थागत स्वरूप देने का बीड़ा उठाया था। ओंकारनाथ ठाकुर ने इसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए संगीत-शिक्षा के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण संस्थानों की स्थापना और संचालन किया।

9.2 लाहौर में गंधर्व महाविद्यालय के प्राचार्य

मात्र 20 वर्ष की आयु में वे गंधर्व महाविद्यालय की लाहौर शाखा के प्राचार्य नियुक्त किए गए। यह उनकी अध्यापन-क्षमता और संगीत-ज्ञान का प्रमाण था। यहाँ उन्होंने अनेक वर्षों तक अध्यापन किया और कई शिष्य तैयार किए।

9.3 भरूच में गंधर्व निकेतन की स्थापना

1919 में वे भरूच लौटे और उन्होंने अपना स्वयं का संगीत-विद्यालय 'गंधर्व निकेतन' स्थापित किया। बाद में उन्होंने इसे 1934 में बॉम्बे और 1942 में सूरत स्थानांतरित किया। यह संस्था उनकी शिक्षण-पद्धति और संगीत-दर्शन का व्यावहारिक केंद्र बनी।

9.4 बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में संगीत संकाय

9.4.1 प्रथम डीन के रूप में नियुक्ति (1950)

1950 में पंडित मदन मोहन मालवीय के निमंत्रण पर ओंकारनाथ ठाकुर बनारस हिंदू विश्वविद्यालय गए और वहाँ नवस्थापित संगीत संकाय के प्रथम डीन नियुक्त किए गए। यह नियुक्ति भारतीय संगीत-शिक्षा के इतिहास में एक मील का पत्थर थी, क्योंकि पहली बार किसी विश्वविद्यालय में संगीत को एक स्वतंत्र संकाय का दर्जा प्राप्त हुआ था।

9.4.2 पाठ्यक्रम का व्यापक डिज़ाइन

उन्होंने संगीत संकाय के लिए एक व्यापक और संतुलित पाठ्यक्रम का डिज़ाइन तैयार किया, जिसमें प्रायोगिक संगीत (गायन, वादन) और संगीतशास्त्र (इतिहास, सिद्धांत, सौंदर्यशास्त्र) दोनों को समान महत्व दिया गया।

9.4.3 संगीतशास्त्र और प्रयोग का समन्वय

उनका दृढ़ मत था कि एक पूर्ण संगीतकार वही है जो अपनी कला के सैद्धांतिक पक्ष को भी समझता है। इसलिए उन्होंने पाठ्यक्रम में संगीतशास्त्र और प्रायोगिक संगीत के समन्वय पर विशेष बल दिया। न्यूमैन (1990) ने भारतीय संगीत-शिक्षा के संस्थागतकरण के संदर्भ में ओंकारनाथ ठाकुर के इस योगदान की चर्चा की है।

10. प्रमुख शिष्य और गुरु-शिष्य परंपरा

10.1 डॉ. प्रेमलता शर्मा

डॉ. प्रेमलता शर्मा (1927-1998) ओंकारनाथ ठाकुर की प्रमुख शिष्याओं में से थीं। वे प्रसिद्ध संगीतशास्त्री बनीं और उन्होंने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में अध्यापन किया। उन्होंने अनेक महत्वपूर्ण पुस्तकों की रचना कर गुरु की संगीत-दृष्टि को सैद्धांतिक आधार प्रदान किया।

10.2 डॉ. एन. राजम

डॉ. एन. राजम (जन्म 1938) हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत की प्रमुख वायलिन वादक हैं। वे ओंकारनाथ ठाकुर के मार्गदर्शन को "एक महान वरदान" कहती हैं। उन्होंने अपने गुरु की गायकी की तकनीकों को वायलिन पर उतारने का सफल प्रयास किया। आज डॉ. राजम के वायलिन-वादन में ओंकारनाथ ठाकुर की गायकी के संस्कार स्पष्ट रूप से सुनाई देते हैं।

10.3 पंडित बलवंतराय भट्ट 'भावरंग' एवं परंपरा का संरक्षण

पंडित बलवंतराय भट्ट 'भावरंग' (1921-2016) ओंकारनाथ ठाकुर के प्रमुखतम शिष्यों में अग्रगण्य स्थान रखते हैं। उन्होंने न केवल अपने गुरु की बंदिशों और गायकी को संरक्षित किया, अपितु उसे व्यवस्थित रूप से भावी पीढ़ियों तक पहुँचाने का भी कार्य किया। ह्यूरी (1980) का शोध-प्रबंध ओंकारनाथ ठाकुर और बलवंतराय भट्ट की गायन-शैलियों के तुलनात्मक अध्ययन पर केंद्रित है, जो इस गुरु-शिष्य परंपरा के अकादमिक महत्व को रेखांकित करता है। अनेक संगीतविदों के मत में, ओंकारनाथ-परंपरा की जीवित निरंतरता में भावरंग जी की भूमिका केंद्रीय रही है। आगे चलकर डॉ. आर. राजेश्वर आचार्य तथा उनके शिष्यों द्वारा यह परंपरा निरंतर प्रवाहित रही।

10.4 अन्य प्रमुख शिष्य

उनके अन्य प्रमुख शिष्यों में यशवंतराय पुरोहित, कनकराय त्रिवेदी, शिवकुमार शुक्ल और फिरोज के. दस्तूर के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सभी ने अपने-अपने क्षेत्रों में गुरु की संगीत-परंपरा को आगे बढ़ाया।

11. राष्ट्रीय आंदोलन में योगदान

11.1 भरूच जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष

1920 के दशक में ओंकारनाथ ठाकुर स्थानीय स्तर पर महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में सक्रिय रहे और भरूच जिला कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष बने। यह एक कलाकार का राजनीतिक-सामाजिक दायित्व के प्रति सजग होने का उदाहरण है।

11.2 असहयोग आंदोलन में सहभागिता

उन्होंने अपनी कला को राष्ट्रीय आंदोलन की सेवा में लगाया। उनकी देशभक्ति गीतों की प्रस्तुतियाँ कांग्रेस के अधिवेशनों में नियमित रूप से होती थीं और जन-जागरण का प्रभावी माध्यम बनती थीं।

11.3 महात्मा गांधी का मूल्यांकन

महात्मा गांधी ने उनके बारे में कहा था—"पंडित ओंकारनाथजी एक गीत से वह कर देते हैं, जो मैं कई भाषणों से नहीं कर सकता"। यह कथन ओंकारनाथ ठाकुर के गायन की असाधारण भावात्मक संप्रेषण-शक्ति का सबसे प्रामाणिक प्रमाण है।

11.4 15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि: संसद भवन में वंदे मातरम

15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि को, जब भारत स्वतंत्र हुआ, संसद भवन में ओंकारनाथ ठाकुर ने राग दरबारी कान्हड़ा में 'वंदे मातरम' गाया। तत्पश्चात् उन्होंने राग मालकौंस में ख़याल प्रस्तुत किया। यह भारतीय स्वतंत्रता के इतिहास का एक अविस्मरणीय क्षण था, जो एक कलाकार और उसके राष्ट्र के बीच के गहरे संबंध का प्रतीक है।

12. अंतर्राष्ट्रीय ख्याति और यूरोप यात्राएँ

12.1 1933: प्रथम यूरोप यात्रा

1933 में ओंकारनाथ ठाकुर यूरोप गए और यूरोप में प्रदर्शन करने वाले प्रथम भारतीय संगीतकारों में से एक बने। उन्होंने जर्मनी, हॉलैंड, बेल्जियम, फ्रांस, इंग्लैंड, वेल्स और स्विट्ज़रलैंड का दौरा किया।

12.2 इटली प्रवास और संस्मरणात्मक प्रसंग

उनकी इटली यात्रा के संबंध में कुछ संस्मरणात्मक प्रसंग उल्लेखनीय हैं। समकालीन लेखों में उल्लेख मिलता है कि प्रसिद्ध इतालवी गायक बेन्यामिनो गिग्ली उनकी स्वर-संपदा से अत्यंत प्रभावित हुए थे। इसी यात्रा के दौरान मुसोलिनी के समक्ष राग-प्रदर्शन का भी उल्लेख मिलता है, जैसा कि पूर्व में वर्णित है। इन प्रसंगों ने उनकी अंतर्राष्ट्रीय ख्याति को और विस्तार दिया।

12.3 1954 तक यूरोप में प्रस्तुतियाँ

वे 1954 तक यूरोप में प्रस्तुतियाँ देते रहे और भारतीय संगीत के सांस्कृतिक राजदूत के रूप में कार्य करते रहे।

13. सम्मान और पुरस्कार

ओंकारनाथ ठाकुर को उनके जीवनकाल में अनेक सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए। 1940 में उन्हें 'संगीत प्रभाकर' की उपाधि मिली। 1955 में भारत सरकार ने उन्हें पद्म श्री से सम्मानित किया। 1963 में संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया। उसी वर्ष बनारस हिंदू विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट् की मानद उपाधि प्रदान की। 1964 में रवींद्र भारती विश्वविद्यालय ने भी उन्हें डी.लिट् से सम्मानित किया।

14. व्यक्तित्व और व्यक्तिगत जीवन

ओंकारनाथ ठाकुर का व्यक्तित्व अत्यंत प्रखर और स्वाभिमानी था। वे एक प्रभावशाली वक्ता भी थे और संगीत पर व्याख्यान देने में सिद्धहस्त थे। उनके लंबे केश और विशिष्ट वेशभूषा उन्हें एक राजसी गरिमा प्रदान करते थे। 1933 में उनकी पत्नी इंदिरा देवी का निधन हो गया; कहा जाता है कि रूस जाते समय उन्हें यह सूचना मिली और वे भारत लौट आए। इसके पश्चात् उन्होंने स्वयं को पूर्णतः संगीत-साधना और शिक्षा के प्रति समर्पित कर दिया।

15. विवाद और समालोचना

15.1 मुस्लिम संगीतकारों के योगदान के मूल्यांकन पर प्रश्न

समकालीन संगीत-साहित्य में ओंकारनाथ ठाकुर के कार्य पर यह आलोचना हुई कि उन्होंने मुस्लिम संगीतकारों के योगदान का अपेक्षाकृत कम मूल्यांकन किया और कतिपय स्थानों पर उन्हें शास्त्रीय संगीत के कथित पतन के लिए उत्तरदायी ठहराया। यह दृष्टिकोण उस समय के सांस्कृतिक-राजनीतिक परिवेश का प्रतिबिंब था और इस पर अकादमिक बहस आज भी जारी है। वेड (1984) और न्यूमैन (1990) ने इस विवाद का उल्लेख किया है।

15.2 समकालीन आलोचना और बहस

उनके इस दृष्टिकोण पर समकालीन संगीत-जगत् में पर्याप्त बहस हुई। तथापि, उनकी संगीत-प्रतिभा और योगदान की महत्ता पर कभी कोई प्रश्नचिह्न नहीं लगाया गया। यह विवाद उनके व्यक्तित्व के उस पक्ष को उजागर करता है जो सांस्कृतिक पुनरुत्थान और पहचान के प्रश्नों से गहराई से जुड़ा था।

16. अंतिम वर्ष और निधन

1954 में उन्हें प्रथम हृदयाघात हुआ, किंतु वे उससे उबर आए और संगीत-साधना जारी रखी। जुलाई 1965 में उन्हें आघात (स्ट्रोक) हुआ जिससे वे आंशिक रूप से लकवाग्रस्त हो गए। 29 दिसंबर 1967 को 70 वर्ष की आयु में उनका निधन हो गया।

17. विरासत और समकालीन प्रभाव

ओंकारनाथ ठाकुर की विरासत बहुआयामी है। आकाशवाणी के अभिलेखागार ने उनके संगीत का एक दोहरा एल्बम जारी किया है, जिसमें 15 अगस्त 1947 की मध्यरात्रि को संसद भवन में गाया गया 'वंदे मातरम' भी शामिल है। उनके शिष्यों—विशेषतः डॉ. एन. राजम, डॉ. प्रेमलता शर्मा, और पंडित बलवंतराय भट्ट 'भावरंग'—तथा उनकी अगली पीढ़ियों के माध्यम से उनकी संगीत-परंपरा आज भी जीवित है।

उनकी सबसे महत्वपूर्ण विरासत यह है कि उन्होंने ख़याल गायन में भावनात्मक गहराई और वैयक्तिक अभिव्यक्ति का जो आयाम जोड़ा, वह आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बना रहा। बनारस हिंदू विश्वविद्यालय का संगीत संकाय, उनके द्वारा रचित कुलगीत, और संगीतांजलि के छह खंड—ये सब उनकी अमर विरासत के साक्षी हैं।

18. निष्कर्ष

पंडित ओंकारनाथ ठाकुर बीसवीं शताब्दी के भारतीय संगीत के एक युग-प्रवर्तक व्यक्तित्व थे। उन्होंने ग्वालियर घराने की ठोस बुनियाद पर खड़े होकर, अपनी वैयक्तिक प्रतिभा से ख़याल गायन में एक नई भावात्मक गहराई का समावेश किया। उनकी गायन-शैली की विशेषताएँ—तीन सप्तकों में समान अधिकार, धात्विक आवाज़ का वॉल्यूम नियंत्रण, काकू और गमक का सूक्ष्म प्रयोग, मौन का सृजनात्मक उपयोग, और अभिनय के माध्यम से शब्दार्थ का विस्तार—उन्हें उनके समकालीनों से पृथक करती हैं।

उनकी राग-दृष्टि रस-सिद्धांत पर आधारित थी। उन्होंने रागों का वर्गीकरण उनके प्रमुख रसों—शृंगार, वीर, करुण—के अनुसार किया और यह सिद्ध किया कि स्वर भाव और रस उत्पन्न कर सकते हैं। वाग्गेयकार के रूप में संगीतांजलि जैसी कृति उनकी रचनात्मक प्रतिभा और विद्वत्ता का जीवंत प्रमाण है। शिक्षक के रूप में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में संगीत संकाय की स्थापना कर उन्होंने भारतीय संगीत-शिक्षा को एक नई दिशा प्रदान की। और एक नागरिक के रूप में, उन्होंने अपनी कला को राष्ट्रीय आंदोलन की सेवा में लगाकर यह प्रमाणित किया कि कला और सामाजिक दायित्व परस्पर विरोधी नहीं हैं।

Copyright@2026 Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

महात्मा गांधी का यह कथन—कि ओंकारनाथ ठाकुर एक गीत से वह कर देते थे जो वे कई भाषणों से नहीं कर सकते थे—उनकी कला की शक्ति का सर्वोत्तम मूल्यांकन है। यह शक्ति, यह असाधारण भावात्मक संप्रेषण-क्षमता, आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करती रहेगी।

19. संदर्भ ग्रंथ सूची

पुस्तकीय स्रोत

वेड, बॉनी सी. (1984). ख़याल: क्रिएटिविटी विदिन नॉर्थ इंडियाज़ क्लासिकल म्यूज़िक ट्रेडिशन. कैम्ब्रिज: कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृ. 258–260.

वेड, बॉनी सी. (2001). "ठाकुर, ओंकारनाथ". स्टेनली सैडी (सम्पा.), द न्यू ग्रोव डिक्शनरी ऑफ म्यूज़िक एंड म्यूज़िशियन्स, खंड 25. लंदन: मैकमिलन पब्लिशर्स, पृ. 336–337.

ह्यूरी, हैरियट कुक. (1980). ए कम्पेरेटिव स्टडी ऑफ ख़याल स्टाइल: पंडित ओंकारनाथ ठाकुर एंड हिज़ स्टूडेंट पंडित बी. आर. भट्ट. वेस्लीयन विश्वविद्यालय, शोध-प्रबंध।

न्यूमैन, डैनियल एम. (1990). द लाइफ़ ऑफ म्यूज़िक इन नॉर्थ इंडिया. डेट्रॉइट: वेन स्टेट यूनिवर्सिटी प्रेस।

पलुस्कर, विष्णु दिगंबर. संगीत बालप्रकाश. विभिन्न संस्करण।

प्राथमिक स्रोत

ठाकुर, ओंकारनाथ. संगीतांजलि (खंड 1–6). विभिन्न संस्करण।

ठाकुर, ओंकारनाथ. प्रणव भारती. भारतीय विद्या भवन संस्करण।

पंडित बलवंत राय भट्ट जी के शिष्य पंडित राजेश्वर आचार्य के साक्षात्कार एवं व्याख्यानों पर आधारित

पत्रिका एवं अभिलेखीय स्रोत

एन.सी.पी.ए., मुंबई. (2024). "वॉइस ऑफ वर्चुओसिटी: ओंकारनाथ ठाकुर"।

एन.सी.पी.ए. अभिलेखागार. "नाद निनाद: फ्रॉम आवर आर्काइव्स – ओंकारनाथ ठाकुर"।

श्रुति पत्रिका, अंक 163, अप्रैल 1998. "ओंकारनाथ ठाकुर एवं बेनितो मुसोलिनी", पृ. 19–21.

द हिन्दू, 1 जुलाई 2012. "एन ऑफरिंग ऑफ रागाज़"।

बिब्लियोलोर. (2013, 23 मई). "ठाकुर एंड मुसोलिनी"।

आउटलुक इंडिया. (2022). "बुल्स आई"।

शाज़ाम. "ओंकारनाथ ठाकुर - अबाउट"।

फ्री म्यूज़िक आर्काइव. "पंडित ओंकारनाथ ठाकुर - जीवनी"।